पूज्य लालचंदभाई के प्रवचन
तत्त्वचर्चा - प्रवचनसार गाथा ११४
सिद्ध पर्याय को कौन जान सकता है?
तारीख १९९०, प्रवचन ५७६

पर्याय को जान सकता है। उसका अर्थ यह हुआ कि भव्य प्राणी ही उस द्रव्य को जान सकता है। और भव्य प्राणी द्रव्य को जानकर इन पाँच पर्याय को जान सकता है। जिसकी पर्याय में सिद्ध अवस्था होनेवाली है वही जीव द्रव्य को जान सकता है। इसलिए पाँचवी पर्याय ली। सिर्फ चार पर्याय नहीं ली। चार पर्याय को तो अभवी भी जानता है। मुमुक्षु: जानता है कहाँ!

पु. लालचंदभाई: भले जाने (कि) है. परंतु... आत्मबुद्धि भले करे। परंतु वे चार पर्याय, और यह सिद्ध पर्याय क्यों ली साथ में? कि जो भव्य है वह ही द्रव्य को जानता है और द्रव्य को जाननेवाले उसके ज्ञान में सिद्ध पर्याय भी ज्ञात हो जाती है। यह विचार आज आया।

ये मुनिराज की जो बात है न बहुत गंभीर होती है। उसमें भाव ब्रह्मांड के भरे होते हैं, संक्षेप में। नहीं तो चार पर्याय तो ठीक हैं, सिद्ध पर्याय तो अभी नहीं है, तो भी जो द्रव्य को जानता है वह ही सिद्ध पर्याय को जान सकता है। द्रव्य को जानने की ताकत जिसकी नहीं है, (वह) सिद्ध पर्याय को कहाँ से जाने? ध्येय को जानता है वह साध्य को जानता है। बहुत गंभीर बात है। आहाहा!

उसे मोक्ष का ज्ञान हो जाता है। सिद्ध पर्याय का अर्थात् मोक्ष का उसे (ज्ञान हो जाता है)। नव तत्त्व में मोक्ष तत्त्व है एक, उस मोक्ष तत्त्व का ज्ञान होता है। संवर निर्जरा को तो जानता है। उदयभाव को तो जानता है, चार प्रकार के उदयभाव लिए। उसमें इस शरीर की बात नहीं है। उसके औदयिकभाव की बात है, मनुष्य के योग्य, देव के योग्य उदयभाव। वह ऐसी अशुद्धि को - उदयभाव को जानता है। क्योंकि संवर-निर्जरा प्रगट हुई उसे जानता है इसलिए वह सिद्ध को जान सकता है। और द्रव्य को जानता है वह ही पर्याय को जानता है, यह इसमें से नियम निकला। अभवी जीव द्रव्य को नहीं जानता इसलिए पर्याय को भी जानने की शक्ति उसकी संकुचित हो गई है, वह यथार्थपने नहीं जानता। जो सिद्ध होनेवाला है जीव, वह ही द्रव्य को जानता है और द्रव्य को जाननेवाला जो जीव है, वह ही पाँच पर्यायों को जान सकता है।

मुमुक्षु: द्रव्य को जाने बिना पर्याय को जान ही नहीं सकता है।

पू. लालचंदभाई: जान ही नहीं सकता है। ये तो अज्ञान है। पर्यायार्थिकनय ही नहीं है। यदि द्रव्यार्थिकनय नहीं है तो पर्यायार्थिकनय (भी) प्रगट नहीं होती है। द्रव्यार्थिकनय प्रगट जिसको हो उसको (ही) पर्यायार्थिकनय प्रगट होती है, वो नियम है। असाधारण बात है! हाँ! द्रव्य को जाने वो पर्याय को यथार्थ जान सकता है। इसलिए पर्यायार्थिकनय ... पर्यायार्थिकनय का जन्म होता है - जब द्रव्यार्थिकनय से द्रव्य को जाने उस ही टाइम पर्याय को जानने की शक्ति की व्यक्ति प्रगट हो जाती है। पर्याय को जानने की शक्ति थी मगर (वह) व्यक्त नहीं थी। द्रव्य को जाना (तो) पर्याय को यथार्थपने

जानने की पर्यायार्थिकनय प्रगट होती है। और उस पर्यायार्थिकनय के द्वारा चार औदयिक भाव और मोक्ष की पर्याय को जानता है। आहाहा!

क्योंकि पाँच पर्याय में वह द्रव्य रहा हुआ है। इसप्रकार द्रव्य है वह पाँच पर्याय के बाहर नहीं है; कर्म में नहीं है, शरीर में नहीं है, घर में नहीं है, कुटुंब में नहीं है। भगवान आत्मा अपनी पाँच पर्याय के मध्य में रहा हुआ है। चार पर्याय के मध्य में नहीं लिया।

मुमुक्षु: पाँच पर्याय के।

पू. लालचंदभाई: (हा)। एक अशुद्ध पर्याय ली और एक पूर्ण शुद्ध पर्याय ली, बस। उसके अंदर सभी संवर-निर्जरा (की पर्यायें) आ जाती हैं।

मुमुक्षु: ये अच्छी लगी बात! ये बात बहुत सुंदर लगी कि भव्य जीव ही द्रव्य को जानता है। वो ही पर्याय को जानता है बार-बार।

पू. लालचंदभाई: अभवी जीव को द्रव्य को जानने की शक्ति ही नहीं है। कभी नहीं जानेगा। तो जो द्रव्य को नहीं जानता है, वो तो पर्याय को जानता ही नहीं है - एक बात। दूसरा, यदि भव्य भी हो, समझो भव्य हो तो जब तक द्रव्य को नहीं जानता है, तहाँ तक पर्याय को (भी) नहीं जानता है। भव्य भी हो तो भी क्या? द्रव्यार्थिकनय भी नहीं है और पर्यायार्थिकनय भी नहीं है। वो ज्ञान के दो अंश हैं, सम्यग्ज्ञान के दो अंश हैं। शास्त्रज्ञान के दो अंश नहीं हैं।

शास्त्रज्ञान के दो अंश नहीं हैं। अनुभवरूप सम्यग्ज्ञान के दो अंश हैं। द्रव्य को जानने के समय ही पर्याय को जानने की शक्ति की व्यक्ति प्रगट हो जाती है। पर्याय को यथार्थरूप से ज्ञान जानता है। पर्याय का जैसा स्वरूप है, जिस गति में, जो गति हो, जो उदयभाव हो उसको भलीभाँति जानता है ज्ञान। बादल आ जाता है तो बादल को जानता है कि नहीं ज्ञान? जानता है इसमें क्या है? बादल आया, बिखर गया, बस जानता है ज्ञान। गृहस्थ को बादल आता है, वो जानता है (मगर) मेरा स्वरूप है ऐसा नहीं जानता। जानता है, बस इतना ही। मर्यादा - जानता है। आया है, गया, आया-गया (ऐसा) जानता है बस। जानना! वो उदयभाव को जानता है। क्यों? (क्योंकि) उदयभाव में द्रव्य स्थित है अंदर में। उदयभाव स्वयं द्रव्य नहीं है। उस विशेष के अंदर सामान्य गर्भित है। तो सामान्य को जानते-जानते उसके विशेष को जानता है। वो विशेष उसका है। जीव का विशेष है, पुद्गल का विशेष नहीं है। पुद्गल का विशेष नहीं है, जीव का विशेष है।

मुमुक्षु: 'जानता है' उसमें ही ऐसा हुआ कि जीव का ही विशेष है।

पू. लालचंदभाई: हाँ! जीव का (विशेष है) क्योंकि पर को जानने की तो चक्षु ही नहीं है। उड़ा दिया न! पर को जानने की तो तीसरी चक्षु ही नहीं है। तो ये जीव का परिणाम है। जीव का परिणाम होने से, जीव, जीव के परिणाम को जानता है।

मुमुक्षु: जानता है, उससे ही सिद्ध होता है कि वो जीव का ही है।

पू. लालचंदभाई: जीव का ही है, बस।

मुमुक्षु: पाँचों भाव जीव के ही हैं।

पू. लालचंदभाई: जीव के हैं।

मुमुक्षु: स्वतत्त्व है न!

पू. लालचंदभाई: स्वतत्त्व (है), बराबर (सही) है।

मुमुक्षु: तत्त्वार्थ सूत्र!

पू. लालचंदभाई: हाँ! बराबर (सही) है। क्यों? (क्यों) कि प्रवचनसार है ये। ये प्रवचनसार शास्त्र है और (उसका) ज्ञेय अधिकार है, चलता है। वो पाँचों पर्याय को स्वज्ञेय में डाला। ये संध्या, मध्यस्थ हुए बिना जीव को प्राप्ति नहीं होती है। पक्षपात नहीं होना चाहिए, बस! जैसा सर्वज्ञ भगवान के ज्ञान में आया, संतों ने शास्त्र लिखे, वैसा ही ज्ञानी को जानने में आता है। साधक को भी ऐसा ही जानने में आता है कि ये स्वतत्त्व है। क्योंकि पर को जानने की तो बात इधर है ही नहीं।

द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय - नय दो हैं। तो द्रव्य को जाने ऐसे द्रव्यार्थिकनय को जान लिया आत्मा ने। जाना, तो एक शक्ति की व्यक्ति ऐसी प्रगट हो गई कि अपने परिणाम को भी ज्ञान जानता है। पाँच पर्याय को जानता है क्योंकि पाँच पर्याय के मध्य में भगवान आत्मा विराजमान है। पाँच विशेषों के अंदर ही सामान्य स्थित है। सामान्य विशेष से बाहर नहीं है। विशेष से बाहर नहीं है तो वो विशेष को ही जानता है। विशेष के बाहर को जानता नहीं है क्योंकि जिसमें द्रव्य है, जिस पर्याय में (द्रव्य है) उस पर्याय को जानता है। (उसके) आगे ज्ञान नहीं जाता है इसको (पर को) जानने के लिए। उसको (परपदार्थ को) जो जानता है ऐसी ज्ञान की पर्याय को जानता है। परपदार्थ को जानती है ऐसी ज्ञान की जो पर्याय है, वो तो स्वतत्त्व में है। तो वो पर्याय तो जीव की है। उस पर्याय को जानता है, बस। नैमित्तिकभूत ज्ञेय को जानता है, निमित्तभूत ज्ञेय को नहीं (जानता)।

मुमुक्षु: क्योंकि नैमित्तिकभूत ज्ञेय में आत्मा छुपा हुआ है।

पू. लालचंदभाई: हाँ! उसमें आत्मा है। तो जिसमें आत्मा है उस आत्मा के ही परिणाम को, परिणाम को ज्ञान जानता है, बस। बाहर जाने का प्रश्न ही नहीं है। प्रमाण से बाहर जाना नहीं (ऐसा) उसमें से निकलता है। जिनागम बहुत गंभीर रहस्यमयी है।

दृष्टि तो हो गई, द्रव्यदृष्टि तो हो गई उसको। वो तो द्रव्य को तो जानने के बाद की बात है। ज्ञानी तो हो गया; तो पर्याय को जानने से अज्ञानी नहीं होता है। पर्याय को 'मेरी पर्याय है' तो (उसमें) आत्मबुद्धि करे तो अज्ञानी बनता है; 'पर्याय का मैं करनेवाला हूँ' तो अज्ञानी हो जाता है; मगर (वह) द्रव्य को जानते-जानते पर्याय को जानता है। द्रव्य को छोड़कर पर्याय को नहीं जानता है। हाँ! द्रव्यार्थिक चक्षु बंद करो ऐसा कहा। उसका अर्थ (ये है) कि ये परिणति तो रह गई मगर उपयोग छूट गया। उपयोग भेद पर आया, ऐसा है।

मुमुक्षु: दृष्टि छूट गई ऐसा नहीं है।

पू. लालचंदभाई: दृष्टि बिल्कुल छूटती नहीं है। (दृष्टि छूट जावे) तो तो पर्यायार्थिकनय नहीं रहा, तो तो अज्ञान हो गया। हाँ! वो पर्यायार्थिकनय तो सम्यग्ज्ञान का अंश है। पर्यायार्थिकनय है वो सम्यग्ज्ञान का अंश है। मिथ्याज्ञान में पर्यायार्थिकनय नहीं होता है; निश्चयनय और व्यवहारनय, दो में से कोई नहीं होता है।

मुमुक्षु: शास्त्रज्ञान में पर्यायार्थिकनय नहीं होता।

पू. लालचंदभाई: नहीं होता है। शास्त्रज्ञान में नहीं होता है। आत्मज्ञान में होता है। आत्मज्ञान में द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय दो भेद पड़ते हैं, ठीक है! है कि नहीं? ऐसा है न!

अपने को तो स्वाध्याय करना है तो पूरा स्वाध्याय करना! उन्होंने जो ताड़पत्र पर लिखा, तो वो लिखने की मेहनत उन्होंने की। तो अपने को समझने की मेहनत तो करना ही चाहिए, बस! वो समझ में आ जाए ऐसी बात है। नहीं आवे ऐसी बात नहीं है कोई। साधारण बात है। कोई ऐसी कोई कठिन बात नहीं है। कठिन नहीं है।

आज (प्रवचनसार गाथा) ११४ का जो आनेवाला है न, उसका स्वाध्याय हो गया। आनेवाला होता है न, उसका विचार चलता है। आहाहा! भव्य (द्रव्य को) जानता है। अभवी द्रव्य को नहीं जानता है।

मुमुक्षु: ये बहुत अच्छी बात कही आपने।

पू. लालचंदभाई: वो भव्य ने द्रव्य को जान लिया, वो सिद्ध पर्याय को जानता है। आहाहा! ये चार पर्याय तो गौण हो जाती हैं। है बस. है - इतना ही। आहाहा! द्रव्य - अपना सामान्य, अपने विशेष में है। अपना जो सामान्य है वो अपने विशेष में ही है। अपने विशेष से बाहर (सामान्य को) ढूँढो, (तो) सामान्य नहीं मिलता है।

मुमुक्षु: बराबर (सही है)! क्योंकि है ही नहीं सामान्य; विशेष के बाहर सामान्य नहीं है।

पू. लालचंदभाई: नहीं है। ये सोना जो चाहिए, तो सोने के घाट में, परिणाम में, सोना ढूँढ सकते हैं। सोनी में सोना नहीं है और अलमारी में सोना नहीं है। कबाट समझे? इसमें नहीं है। और डब्बी में? डब्बी में सोना नहीं है, सोना। सोना तो उसके परिणाम के मध्य में है। परिणाम को गौण करो तो सोना दृष्टि में आ जाता है। सोना दृष्टि में आया तो ये सोने का परिणाम है - ऐसा ज्ञान (हो जाता है)। ये सोने का परिणाम है, ये लोहे का परिणाम (नहीं है)। तो चारगति और सिद्ध गति ये जीव का परिणाम है, अजीव का परिणाम नहीं है।

मुमुक्षु: माने जीव को जानने के बाद जीव के परिणाम का ज्ञान होता है।

पू. लालचंदभाई: सच्चा ज्ञान होता है। (जो) जीव को नहीं जानता है वो तो परिणाम को (भी) नहीं जानता है। वो तो अज्ञान है न! अज्ञान में दो नय कहाँ हैं? शास्त्रज्ञान में नय नहीं होते हैं। आत्मज्ञान के साथ ही नय का जन्म हो जाता है, अनुभूति के काल में।

मुमुक्षु: सोने को जाने तो सोने के परिणाम का ज्ञान होता है।

पू. लालचंदभाई: हाँ! डब्बे को जाने तो?

मुमुक्षु: नहीं होगा।

पू. लालचंदभाई: क्योंकि डब्बे में सोना है ही नहीं। सोना अपने विशेष में है, और विशेष भी अपना है, सोने का; उस विशेष में सोना है। हाँ! इतना सही कि पहले सोने का परिणाम जो है उसे जानना बंद कर दे और सोने को देख ले। बाद में सोना देखने के बाद, अरे! ये तो सोने का परिणाम है, लोहे का परिणाम नहीं है।

मुमुक्षु: बाद में परिणाम को जानना ही है, तो पहले परिणाम का जानना बंद क्यों कराते हो?

पू. लालचंदभाई: क्योंकि सम्यक् रूप से परिणाम को नहीं जान सकता है, परिणाम में आत्मबुद्धि कर लेता है। देवगति में, मनुष्यगति में आत्मबुद्धि करता है। पहले उसको बंद कर दे, पर्यायार्थिकचक्षु (को) बंद कर दे।

जाने हुए का श्रद्धान हो जाएगा - उसे (पर्यायार्थिक चक्षु को) बंद कर दे। और खुली हुई चक्षु के द्वारा द्रव्य को जान तो द्रव्य में आत्मबुद्धि हुई, सम्यग्ज्ञान हुआ, अनुभव हुआ। अनुभव होते ही एक दूसरी पर्याय को जाननेवाला ज्ञान साथ-साथ प्रगट होता है।

ये सब अनुभूति के काल में, निश्चयनय-व्यवहारनय-प्रमाणज्ञान, इन सब का अंदर में ही जन्म होता है। एक समय में, हो! ज्ञान की पर्याय तो एक है, उसके नाम तीन हैं। विषयभेद से नामभेद है, वरना ज्ञान की पर्याय तो एक ही है। वो ज्ञाता के अभिप्राय से नाम बदल जाता है। ज्ञाता का जो अभिप्राय है, कि पर्याय को जाने सो पर्यायार्थिकनय - तो नाम बदल गया; और द्रव्य को जाने सो द्रव्यार्थिकनय; (और) दो को जाने सो प्रमाण।

मुमुक्षु: ज्ञान की पर्याय तो एक ही है।

पू. लालचंदभाई: एक ही है। समय एक, पर्याय एक और उसके विषय तीन। आहाहा! मगर भेद नहीं (है)। ज्ञान की पर्याय जानने में नहीं आती है, ज्ञायक जानने में आता है। खलास! जो ज्ञान की पर्याय जानने में आवे तो निश्चयनय और व्यवहारनय और प्रमाण (हो गया)। परंतु अनुभव के काल में भेद जानने में नहीं आता है, अभेद जानने में आता है। ज्ञान की पर्याय जानने में नहीं आती है। वो तो पर्यायार्थिकचक्षु बंद हो जाती है उस टाइम। भेद पर लक्ष नहीं है। भेद पर लक्ष है तहाँ तक अनुभव नहीं होता है। ऐसी चीज है बोलो!

वास्तव में कुंदकुंद भगवान के शास्त्र अद्भुत हैं। उसका कारण है (कि) सीमंधर भगवान के पास जाकर आये और हमारे लिए माल लाए और गुरुदेव ने वह डिब्बा खोलकर हमें खिलाया माल। आहाहा! भले ही कुंदकुंद भगवान लाए परंतु यदि गुरुदेव न मिले होते तो इसका रहस्य खोलनेवाला कोई नहीं। भले रहस्य खोलनेवाले कितने ही ज्ञानी हो गए पूर्व में; उन्होंने अपनी शक्ति अनुसार बहुत खुलासे किये हैं, गृहस्थ ज्ञानियों ने। परंतु ये (गुरुदेव) गृहस्थ ज्ञानी होने पर भी इनका जो स्पष्टीकरण और खुलासा कोई अलग प्रकार का, विशिष्ट प्रकार, जिसे कहते हैं विशिष्ट प्रकार, खास प्रकार। शक्तिशाली पुरुष हो गए।

सही है न, क्योंकि अभवी जीव, द्रव्य को तो जान सकता नहीं।

मुमुक्षु: वह सिद्ध पर्याय को कहाँ से जाने?

पू. लालचंदभाई: कहाँ से जाने?

मुमुक्षु: बहुत अच्छी बात है। क्योंकि अपनी सिद्ध पर्याय को जानता है न!

पू. लालचंदभाई: अपनी बात है, पर की बात नहीं है।

मुमुक्षु: पर की तो बात नहीं है।

पू. लालचंदभाई: हाँ! अपना द्रव्य और अपनी द्रव्य की पर्याय, बस! इन दोनों (के) बीच की बात है। बाहर की बात तो है ही नहीं।

पर को जाननेवाला तो ज्ञान ही नहीं है। वहाँ तो बंद कर दिया है। या तो द्रव्य को जाने या पर्याय को जाने, बहुत आगे बढ़े तो द्रव्य पर्याय को युगपद जाने, बस! प्रमाण के बाहर जाने की तो सख्त मनाई की (है)। ज्ञान ही नहीं है, ऐसा कहते हैं, पर को जाननेवाला ज्ञान ही नहीं है - यहाँ तक गुरुदेव ने कहा! क्योंकि यहाँ तो परिधि में ही उसका ज्ञान रुकता है; परिधि में - द्रव्य में और द्रव्य में से वापस पर्याय में, वापस पर्याय में से वापस द्रव्य में, बस इतने में ही, जानने की परिधि उसकी बस। उपादेय तो द्रव्य ही है, परंतु जानने की परिधि द्रव्य-पर्याय दोनों (हैं)।

मुमुक्षु: सामान्य को जानते-जानते विशेष को जानता है, इसलिए उसमें एकत्वबुद्धि नहीं होती है।

पू. लालचंदभाई: नहीं होती है।

मुमुक्षु: अपना परिणाम जानने पर भी उसमें एकत्वबुद्धि नहीं होती है।

पू. लालचंदभाई: नहीं होती है क्योंकि अहम् सामान्य में आ गया। सामान्य में अहम् आया, स्व-स्वामी संबंध सामान्य के साथ आया, सामान्य मेरा स्व और मैं उसका स्वामी। पर्याय मेरा स्व और मैं उसका स्वामी - ऐसा है ही नहीं। स्व-स्वामी संबंध नहीं है। द्रव्य के साथ निश्चय से है और व्यवहार से पर्याय के साथ हो तो व्यवहार से जानता है, बस - पर्याय जीव की है बस। ये जीव द्रव्य की पर्याय है क्योंकि इधर जीव द्रव्य लिया है, जीवतत्त्व नहीं लिया है। ये द्रव्य की पर्याय है। ज्ञेय अधिकार है। ध्येय पूर्वक ज्ञेय होता है।

मुमुक्षु: ज्ञेय की बात है।

पू. लालचंदभाई: ज्ञेय की बात है। ध्येय का अधिकार नहीं है - ये समझना चाहिए।

मुमुक्षु: इसलिए पूरा सामान्य-विशेषात्मक, पूरी वस्तु है।

पू. लालचंदभाई: पूरा ज्ञान हो जाता है, बस। ज्ञान का तो स्वभाव है (कि) अपने द्रव्य-गुण-पर्याय को जैसा है वैसा जाने। ऐसा जानने में तो कोई दोष नहीं है। द्रव्य को जानने के बाद परिणाम को जानता है ज्ञान, बस! आगे-पीछे नहीं करता है, जानता है। आहाहा! जानता है, उसमें सत् का स्वीकार है; करने में सत् का खून है। आत्मा का स्वभाव जानना है बस, ज्ञाता है, बस। केवल जाननहार है न! बस! केवल ज्ञानमात्र स्वभाव। आत्मा का स्वभाव केवल ज्ञानमात्र - ऐसा शब्द है। है न उसमें, (समयसार गाथा) ३२० में है, केवल ज्ञानमात्र स्वभाव।

सिद्ध पर्याय (को) जोड़ दिया न साथ में इसलिए भव्य हो गया।

मुमुक्षु: भव्य को ही होता है न!

पू. लालचंदभाई: भव्य को होता है। और भव्य जानता है द्रव्य को तो वो सिद्ध पर्याय को जानता है। नवतत्त्व में मोक्ष का ज्ञान हो गया उसको।

मुमुक्षु: अभव्य द्रव्य स्वभाव को ही नहीं जानता तो पर्याय को, सिद्ध पर्याय को कहाँ से जाने?

पू. लालचंदभाई: कहाँ से जाने?

केवलज्ञान को कहाँ से जाने? मोक्ष हुआ वह कहाँ से पता चले उसे? आहाहा!

यथार्थ बात है! ये झूठ-मूठ नहीं है मृगजल के जैसे। मोक्ष का ज्ञान हो जाता है, बोलो! मोक्ष का

श्रद्धान तो होता है मगर मोक्ष का ज्ञान होता है। मोक्ष पर्याय का श्रद्धान वो तो व्यवहार है; मगर मोक्ष पर्याय का ज्ञान हो जाता है वो निश्चय है, वो प्रत्यक्षवत् दिखता है।

मुमुक्षु: इसलिए निश्चय है।

पू. लालचंदभाई: इसलिए निश्चय है। प्रत्यक्षवत् (दिखता है)। वो कह सकता है कि आज मोक्ष, मुझे मोक्ष का दर्शन हो गया, केवलज्ञान का दर्शन हो गया। बोलो!

आत्मा, साधक आत्मा जब अपनी भावना में लीन होता है, तब मानो साक्षात् केवलज्ञान हुआ हो या साक्षात् मोक्ष हुआ हो, क्या शब्द है? शब्द है कोई।

मुमुक्षु: केवली हो गया हो साक्षात्।

पू. लालचंदभाई: मानो साक्षात् केवली ही हो गया हो (समयसार कलश ३१)। हाँ! केवली शब्द है न? सही है न? भावार्थ में है न? साक्षात् केवली ही हो गया हो। बोलो! साक्षात् केवली बहुत गजब शब्द लिखा। हें? क्योंकि श्रुतज्ञान में उसका, श्रुतज्ञान की पर्याय में उसका ज्ञान हो जाता है। जो भावि पर्याय प्रगट होनेवाली है, अभी शक्तिरूप है। शक्तिरूप होने पर भी सत् है और उसका ज्ञान बराबर (यथार्थ रूप से) हो जाता है। आहाहा! क्यों हुआ उसका ज्ञान? प्रगट तो है नहीं। प्रगट तो है नहीं, उत्पाद तो नहीं है तो भी उस उत्पाद पर्याय को जान लिया। क्योंकि द्रव्य में पड़ी है। तो द्रव्य पर दृष्टि गई, तो द्रव्य में पड़ी हुई ज्ञान की पर्याय का ज्ञान हो जाता है। ख्याल आया?

मुमुक्षु: हाँ! द्रव्य में वो शक्तिरूप है अभी। तो उसका उत्पाद तो होगा भविष्य में। फिर भी द्रव्य पर दृष्टि गई इसलिए द्रव्य में जो शक्ति पड़ी है, उसका भी ज्ञान हो जाता है।

पू. लालचंदभाई: हाँ! आहाहा!

पात्र जीव को जँचे ऐसी बात है। आहाहा! पर्यायार्थिकनय द्वारा उसने साक्षात् मोक्ष की पर्याय को जान लिया। आहाहा! सिद्ध पर्याय का ज्ञान हो गया। परंतु प्रभु! प्रगट नहीं है न? जो प्रगट होवे उसका ही ज्ञान हो और अप्रगट हो उसका ज्ञान न हो ऐसा हो सकता है? प्रगट-अप्रगट सभी पर्यायों को जान लेता है ज्ञान, ताकत ऐसी है। व्यय हो चुकी पर्याय, शक्तिरूप पर्याय, सभी को जानता है।

मुमुक्षु: जानता है।

पू. लालचंदभाई: जानता है, (वो) ज्ञान की पर्याय की ताकत है। भूत, भविष्य, वर्तमान - तीनकाल की पर्याय का पिंड जो द्रव्य है, उसको जानता है। द्रव्य को जाना तो उसमें पर्याय का ज्ञान आ गया, इसमें आ जाता है। हो गया, तो हो जाता है।

मुमुक्षु: ये बहुत बढ़िया बात कही। भव्य को द्रव्यदृष्टि हुई, द्रव्य का ज्ञान हुआ, तो द्रव्य में जो शक्तिरूप है अथवा जो योग्यतारूप पुरानी या भूतकाल की (पर्याय) सबका ज्ञान हो ही जाता है।

पू. लालचंदभाई: हो ही जाता है, automatic (अपने आप) हो जाता है। द्रव्य में योग्यता और द्रव्य में शक्ति - दो का ज्ञान हो जाता है। क्योंकि द्रव्य में योग्यता और शक्ति, (दोनों) द्रव्य में पड़ी है न, भले उत्पाद-व्यय नहीं हो अभी; द्रव्य को जाना उसने सब कुछ जान लिया - ऐसा पाठ है।

जिसने आत्मा जाना उसने सब जाना! **एगम णाणे सो सव्व णाणं** - ऐसा कुछ आता है। एक को जाने - आत्मा को, उसने सबको जान लिया (प्रवचनसार गाथा ४८-४९)। बोलो इस सिद्ध पर्याय में

से इतना निकलता है। पर्यायार्थिकनय से सिद्ध पर्याय को जानता है, बोलो! पाँच पर्याय को जानता है ज्ञान। उसमें ऐसा नहीं लिखा कि चार को जानता है और सिद्ध (पर्याय) को नहीं जानता। (सिद्ध) पर्याय ली है या नहीं? यथार्थ बात है। रहस्यवाली बात है। आहाहा! कुंदकुंद भगवान की वाणी टँकोत्कीर्ण है।

मुमुक्षु: और उसका स्पष्टीकरण भी आप कितना अंदर जाकर ओहोहो! 'क्यों लिखा है? सिद्ध पर्याय क्यों ली है?' ओहो!

पू. लालचंदभाई: सिद्ध पर्याय तो है नहीं, चार पर्याय हैं। तो चार पर्याय को साधक जानता है। सिद्ध पर्याय लेने का कारण क्या?

मुमुक्षु: साधक हुआ है तो सिद्ध तो होनेवाला ही है, इसलिए सिद्ध पर्याय को जानता है। साधक को ही सिद्ध पर्याय का ज्ञान होता है।

पू. लालचंदभाई: ज्ञान होता है।

मुमुक्षु: और साधक को द्रव्य स्वभाव का ज्ञान हुआ इसलिए तो साधक हुआ। इसलिए उसको सिद्ध पर्याय का भी ज्ञान होता है। बहुत सुंदर बात है। जिसको ध्येय का ज्ञान हुआ उसी को साध्य का ज्ञान होता है।

पू. लालचंदभाई: साध्य का ज्ञान होता है, बस। ध्येय को नहीं जाना तो साध्य को जानता नहीं है। अभव्य नहीं जानता है। अभव्य के दो प्रकार हैं - एक त्रिकाल अभव्य और एक वर्तमान में सम्यग्दृष्टि नहीं है, वो भी अभव्य है। भव्यभावरूप परिणमन नहीं है (तो उसको) अभव्य कह सकते हैं। हाँ! ऐसा है। ऐसा प्रयोग नहीं करना, मगर है, ऐसा है।

भव्यभाव का परिणमन न होवे, जब तक उसका भव्यभावरूप परिणमन नहीं है तब तक अभव्य है। 'अ +भव्य' अर्थात् वो वाला अभव्य नहीं। 'अ +भव्य' (अर्थात्) भव्यरूप परिणमन अभी नहीं हुआ है, ऐसा। ऐसा। जैसे कि साधक के ज्ञान को भी अज्ञान कहते हैं, ऐसे। ज्ञान है परंतु फिर भी अज्ञान - पूर्ण ज्ञान (नहीं है) उस अपेक्षा से। वह है तो भव्य, परंतु भव्यभावरूप - सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमन नहीं हुआ, तो उसे भी किसी अपेक्षा से अभव्य कहा है।

यह तो साधक आत्मा को जिसने जाना वह सिद्ध पर्याय को जानता है। पाँच पर्याय को जानता है बोलो, पाँचों पर्याय को जानता है ऐसा लिखा। उसमें चार को जानता है और सिद्ध पर्याय को नहीं जानता ऐसा नहीं। पर्यायार्थिकनय से पाँचों ही पर्याय को जानता है वह, बोलो! परंतु हो उसे जाने, ना हो उसे कहाँ से जाने? ज्ञान में ज्ञेय होता है, ज्ञान में ज्ञेय होता है। वे पाँचों ज्ञेय हो जाते हैं। भले क्रम-क्रम से हो वह अलग बात है। परंतु उसका विषय, सम्यग्ज्ञान का विषय पाँच पर्यायें हैं।

बहुत गंभीर बात है। आहाहा! बैठनी ही कठिन (पड़े) पहले तो। कि यह क्या बात करते हो? सिद्ध पर्याय, (यह) तो पंचमकाल है, केवलज्ञान तो है नहीं, और केवलज्ञान का ज्ञान हो? कहते हैं हाँ! केवलज्ञान का ज्ञान होता है उसे सम्यग्ज्ञान हम कहते हैं, बोल! ऐसी बात है।

मुमुक्षु: सही बात है!

पू. लालचंदभाई: एकदम सही है।

मुमुक्षु: एकदम सही बात है! जो है उसको जानता है।

पू. लालचंदभाई: हाँ!

मुमुक्षु: केवलज्ञान की पर्याय है शक्तिरूप, उसको जानता है।

पू. लालचंदभाई: वह तो जानता है, जानता है। बराबर (यथार्थ) जानता है। जानने में व्यक्त को जाने और अव्यक्त को न जाने, ऐसा ज्ञान नहीं है। ज्ञान तो सबको जाने, व्यक्त-अव्यक्त सबको जाने। इसलिए सिद्ध पर्याय ले ली, बोलो! आहाहा! कितना गंभीर पाठ बनाया।

चार गति और सिद्ध पर्याय, पाँच पर्याय में - विशेष में, उसका विशेष है, उसमें सामान्य रहा हुआ है। उस सामान्य को देखने के बाद उस सामान्य की पाँच पर्यायें-उनका ज्ञान हो जाता है, बोलो! आहाहा! संध्या! गजब बात है; कुंदकुंद की वाणी और अमृतचंद्राचार्य की टीका - न भूतो न भविष्यति। गुरुदेव फरमाते थे-यह टीका है अमृतचंद्राचार्य की, न भूतो न भविष्यति। कुंदकुंद आचार्य भगवान के लिए किसी विद्वान ने कहा है - न होगा, नहीं होंगे कुंदकुंद जैसे।

मुमुक्षु: हुए हैं, हैं न होयेंगे मुनिन्द्र कुंदकुंद से।

पू. लालचंदभाई: हाँ! मुनीन्द्र कुंदकुंद बस वह शब्द है, सुंदर है वह। कुंदकुंद मुनि जैसे हुए नहीं और होंगे भी नहीं।

मुमुक्षु: न हैं, न होंगे।

पू. लालचंदभाई: न हैं, न होंगे। अभी नहीं हैं और न होंगे, न हुए।

मुमुक्षु: पूर्व में नहीं हुए?

पू. लालचंदभाई: हाँ! क्योंकि तीसरा नाम उनका है।

मुमुक्षु: हाँ! बोलो! गौतम गणधर के बाद।

पू. लालचंदभाई: आहाहा! और वह यथार्थ दिखाई देता है, दिखाई देता है यह। चार पर्याय के साथ पाँचवी सिद्ध की पर्याय जोड़ दी। आहाहा! तब ज्ञेय पूरा होता है। चार पर्याय को जाने और सिद्ध की पर्याय को न जाने तो स्वज्ञेय पूरा नहीं होता।

मुमुक्षु: वाह, वाह!

पू. लालचंदभाई: ख्याल आया? आ गया ख्याल?

यह एक सेकेंड में - उसे तर्क नहीं आता, कभी पूछती नहीं है। ख्याल आता है? तो कहती है हाँ, आ गया ख्याल। क्योंकि विषय पूरा तब होता है सिद्ध पर्याय को जाने तब स्वज्ञेय पूरा होता है। यदि चार पर्याय को जाने तो स्वज्ञेय पूरा नहीं होता। भले ध्येय है, परंतु स्वज्ञेय पूरा नहीं होता। क्योंकि वे जीव के परिणाम हैं न?

मुमुक्षु: और आनेवाला है वो परिणाम।

पू. लालचंदभाई: हाँ! आनेवाला है। अवश्य आनेवाला है न!

मुमुक्षु: उसका दर्शन होता है।

पू. लालचंदभाई: उसका दर्शन होता है।

मुमुक्षु: उसको जानता ही है।

पू. लालचंदभाई: जानता ही है।

मानो साक्षात् केवली हुआ हो। आहाहा! वह जब लिखा उन्होंने और पढ़ा मैंने, आहाहा!

मुमुक्षु: सिद्ध पर्याय का दर्शन होता है इसलिए भव्य लिया, अभव्य नहीं लिया। भव्य को ही सिद्ध पर्याय ..

पू. लालचंदभाई: भव्य को, द्रव्य का दर्शन भव्य को होता है। और भव्य को दर्शन होता है तो पूर्ण पर्याय का भी ज्ञान उसको, भव्य को होता है - ऐसा। इसलिए पहले द्रव्य लिया और बाद में सिद्ध पर्याय ली। क्योंकि सिद्ध पर्याय का ज्ञान, द्रव्य के ज्ञान बिना होता नहीं है क्योंकि सिद्ध पर्याय प्रगट नहीं है, वो शक्तिरूप है। तो शक्तिरूप द्रव्य को जाना तो द्रव्य में शक्तिरूप पर्याय को जान लिया। बाद में पर्याय को जाना ऐसा लिया।

मुमुक्षु: वो ही क्रम है।

पू. लालचंदभाई: क्रम है, अनुक्रम है। अनुक्रम है।

पूरा ज्ञेय हो गया। खलास! आज पूरा ज्ञेय हो गया। श्रुतज्ञान में केवलज्ञान का दर्शन हुआ! जान लिया, पाँच पर्याय को जान लिया? कि हाँ! पाँच (को) जान लिया। पूरा ज्ञेय हो गया, खलास। आहाहा!

मुमुक्षु: पंचमकाल में पूरा ज्ञेय हो गया?

पू. लालचंदभाई: हाँ! पंचमकाल में पूरे ज्ञेय की बात है। काल-बाल है नहीं आत्मा में।

काल को कवलित कर जाये ऐसा आत्मा है। काल बाधक नहीं होता उसे। आरा-फारा कैसा? गुरुदेव कहते 'आरा-फारा कैसा?'।

मुमुक्षु: उसे पर्याय बाधक नहीं होती।

पू. लालचंदभाई: हाँ, बाधक नहीं होती फिर क्या बाधक हो? अंदर जाने में कहाँ कोई अड़ता है? द्रव्य के दर्शन कर भाई। आहाहा! सिद्ध पर्याय का तुझे ज्ञान हो जाएगा। आहाहा! परंतु इस काल में साहेब? सम्यग्दर्शन का ज्ञान तो होता है। अरे! हम कहते हैं सिद्ध पर्याय, तेरी सिद्ध पर्याय को तू जान लेगा। बहुत (अद्भुत) कुंदकुंद की वाणी और अमृतचंद्राचार्य की टीका (परिपूर्ण है)। माल ही माल बस।

पू. लालचंदभाई: मालामाल! मालामाल! ध्येय पूर्वक ज्ञेय होता ही है।

मुमुक्षु: पहले जो चारगति ली उसमें ऐसा भी आता है न कि चारों गतियों में ध्येय पूर्वक ज्ञेय होता है।

पू. लालचंदभाई: हाँ! चारों गतियों में ध्येय पूर्वक ज्ञेय होता है। वो उसमें (से) निकलता है।

मुमुक्षु: चार पर्याय - चार गति ली न!

पू. लालचंदभाई: हाँ! चारगति में कोई भी गति में सम्यग्दर्शन होता है, तो सम्यग्दृष्टि को ध्येय जाना उसको ज्ञेय आ गया पूरा।

मुमुक्षु: हाँ! चारगति के जीव सिद्ध का दर्शन कर सकते हैं।

पू. लालचंदभाई: हाँ! करते हैं, हाँ। सिद्ध का दर्शन कर सकते हैं, चारों गति के जीव। कोई ऐसा नहीं है कि मनुष्य गतिवाला जीव दर्शन करे, देव गतिवाला करे (और) तिर्यंच और नारकी नहीं करे - ऐसा नहीं है। क्योंकि नये सम्यग्दृष्टि का जन्म चारगति में, किसी भी गति में, हो जाता है। मनवाला प्राणी

है न! (वो) चारगति में, कोई भी गति (में) हो उसमें क्या है? सम्यग्दर्शन होता है तो सिद्ध पर्याय का ज्ञान हो जाता है उसको।

मुमुक्षु: (जो) द्रव्य को जानता है उसको द्रव्य-गुण-पर्याय का ज्ञान हो जाता है।

पू. लालचंदभाई: हो जाता है, जरूर होता है। और न्याय से, logic (युक्ति) से बैठती है बात, उसमें कोई तर्क का अवकाश नहीं है। बैठ जाती है बराबर (यथार्थ), उसमें क्या है?

मुमुक्षु: आपका ध्येय भी गजब का है और ज्ञेय भी गजब का है। ध्येय में कोई भी परिणाम का प्रवेश नहीं है। ज्ञान की पर्याय का (भी) प्रवेश नहीं है।

पू. लालचंदभाई: नहीं है।

मुमुक्षु: ऐसा ध्येय समयसार। और ज्ञेय में, सब पर्यायों का ज्ञान हो जाता है।

पू. लालचंदभाई: उस बात की सिद्धि आज प्रवचनसार से की। शास्त्र से सिद्ध करने से मजा आता है। अनुभव की बात कोई होवे तो भी आचार्य भगवान को आगे करके सिद्ध करने में..., वो आचार्य भगवान का विवेक है। दूसरे जीव को श्रद्धा का वो कारण होता है, निमित्त कारण आगम होता है। और सैकड़ों, हजारों, लाखों में कोई जीव ऐसा होता है कि अनुभवी बात करता है तो वो पकड़ लेता है। उसको आगम का साथ (आधार) देवें तो कहे कि 'आगम का साथ मत दो, हमको ख्याल आ गया' - ऐसा कोई जीव होता है। General (सामान्य) समाज के अंदर आगम के श्रद्धान से उसको तसल्ली होती है।

आहाहा! सिद्ध पर्याय लिखी पाँच पर्याय में। सिद्ध पर्याय का ज्ञान होता है? कि हाँ! होता है। देखो ११४ गाथा। प्रवचनसार की गाथा (११४) देखो। ऐसा नहीं लिखा है कि श्रुतज्ञान का ज्ञान होता है, सम्यग्दर्शन का ज्ञान होता है - ऐसा नहीं लिखा है। सिद्ध पर्याय का ज्ञान होता है तो उसके अंदर सब गर्भित हो गया। वो तो आ गया, संवर-निर्जरा का ज्ञान होता है वो तो आ गया। वो कहने की क्या जरूरत है?

मुमुक्षु: हाँ! इतना तो खुद तो समझो।

पू. लालचंदभाई: हाँ! समझो!

मुमुक्षु: हर बात थोड़ी लिखी जाएगी!

पू. लालचंदभाई: हाँ, (हर बात) लिखी नहीं जाती है।

मुमुक्षु: फिर जब पूर्णता का ज्ञान होता है तो अपूर्णता का ज्ञान तो आ गया उसमें।

पू. लालचंदभाई: आ गया उसमें, आ गया। गजब की बात है! आगम में से निकले न, तो मेरे को बहुत मजा आता है।

मुमुक्षु: आपके हृदय में आगम है। आप स्वयं आगम हो।

पू. लालचंदभाई: वो ठीक है, मगर हम तो...

मुमुक्षु: इसलिए उसमें से भी वो ही निकलता है।

पू. लालचंदभाई: अच्छी तरह से मिलान हो जाता है। मिलान की अपेक्षा नहीं है मगर सहज मिलान हो जाता है। मिलान करने नहीं जाता है। मिलान एकाएक हो जाता है।

आत्मा की ताकत अचिंत्य है, बस। अचिंत्य सामर्थ्य से भगवान आत्मा भरा है। पाँच मिनिट है बाकी, ५:३० बंद करना, आज ४:३० शुरू हुआ था न, इसलिए।

आहाहा! सब माल ज्ञायक में भरा है। सिद्ध पर्याय भी ज्ञायक में भरी है, अंदर में भरी है। पूर्ण ज्ञान, पूर्ण आनंद, पूर्ण वीर्य!

फिरोजाबाद में ध्येय पूर्वक ज्ञेय की बात चली थी। उसका विशेष स्पष्टीकरण, topmost (सर्वोच्च) स्पष्टीकरण। सिद्ध पर्याय को जानता है श्रुतज्ञानी, बोलो! आहाहा! क्या कलम चलाई है आपने! कि जैसा है वैसी चलाई। हमको दर्शन सिद्ध पर्याय का होता है (ऐसा) साधक कहता है, इसलिए पाँच पर्याय को ज्ञान जानता है बस। जानता है वो लिखा है। उन्होंने क्या लिखा? हमने जान लिया (कि) पाँच पर्याय को जानता है श्रुतज्ञान। ऐसा हमने लिख दिया। हें? आहाहा! जानकर लिखा है, सुनकर नहीं (परंतु) अनुभव करके।

मुमुक्षु: सुनकर लिखी जाए ऐसी बात नहीं है।

पू. लालचंदभाई: सुनकर लिखी जाए ऐसी बात ही कहाँ (है)!

मुमुक्षु: ऐसी बात नहीं है यह। मुमुक्षु: इंद्रियज्ञान से सिद्ध पर्याय का दर्शन कहाँ होता है?

पू. लालचंदभाई: नहीं होता है। तो कहाँ से लिख सकें? इंद्रियज्ञान जो आत्मा को, ध्येय को नहीं जानता है तो साध्य को कहाँ से जाने? वो तो सब अतीन्द्रियज्ञान की महिमा है, बस। ताकत अतीन्द्रियज्ञान की है सब। सिद्ध पर्याय को जानने की ताकत अतीन्द्रियज्ञान में है, इंद्रियज्ञान में नहीं है।

मुमुक्षु: इंद्रियज्ञान ज्ञान ही नहीं है न!

पू. लालचंदभाई: इंद्रियज्ञान बहिर्मुख है, मूर्तिक है और बंध का कारण है - (ऐसे) तीन विशेषण हैं। प्रवचनसार में दिए हैं वे।

ये समयसार और प्रवचनसार ये दो शास्त्र संधि के हैं। सारे जिनागम का सार है। ध्येय की मुख्यता समयसार में भर दी और ज्ञेय की मुख्यता प्रवचनसार में भर दी (है)। ध्येय पूर्वक ज्ञेय होता है, बस। दो में (से) कोई शास्त्र गौण नहीं करना। है बस, ऐसा जानना।

मुमुक्षु: ध्येय पूर्वक ज्ञेय जिनागम का सार है।

पू. लालचंदभाई: जिनागम का सार है। ध्रुव का दर्शन हुआ तो उत्पाद-व्यय-ध्रुव का ज्ञान हो जाता है। शर्त ध्रुव की है, पहली शर्त, अनुक्रम ध्रुव का है।

मुमुक्षु: वो तो शर्त main (मुख्य) है।

पू. लालचंदभाई: main है। ध्रुव को जिसने जाना उसने उत्पाद-व्यय को जाना, बस! पर्याय को जाना। भव्य को दो का ज्ञान होता है।

मुमुक्षु: यह तो बहुत सुंदर। एकदम यथार्थ बात है। परम सत्य बात है।

पू. लालचंदभाई: उसकी ताकत कैसी कि सिद्ध पर्याय को जाने, बोलो! आहाहा! चमड़े को मत देख, हिरण के चमड़े को मत देख, सिंह के चमड़े को मत देख। आहाहा! (महावीर) भगवान हो गया वह तो, सिंह के भव में सम्यग्दर्शन हुआ। अंतर्मुहूर्त पहले हिंसा के परिणाम, तीव्र हिंसा के, संज्ञी पंचेन्द्रिय का घात किया, बोलो! मुँह में आहाहा! अभक्ष मुँह में भरा था। मुँह धोने नहीं गया। कुल्ला

करने नहीं गया। कुल्ला करते हैं न! ऐसे ऊपर से आए। परिणाम पलट गए। आहाहा! ये कौन? बोलो! परिणति पलटने लगी। आहाहा! कषाय की तीव्रता थी, कषाय की मंदता होने लगी, विशुद्धिलब्धि। आहाहा! परिणाम कोमल होने लगे। और जहाँ देशनालब्धि छूटी (अंतर्मुख हो गया)। हम सुनकर आए हैं महाविदेह क्षेत्र में से, आप २४वें तीर्थंकर होनेवाले हो। अरे! आहाहा! बोलो!

गुरुदेव कहते 'उनकी भाषा क्या? उसने सुना क्या? उसने पकड़ा क्या?' गुरुदेव ने तो सब.. संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव है न, किन्हीं शब्दों द्वारा, किन्हीं इशारों के द्वारा, सब समझ सकता है। मनवाला प्राणी है न, कि कुछ मेरे हित की बात करते हैं।

मुमुक्षु: अरे! मनुष्य तो सिंह को देखकर के दूर भागते हैं।

पू. लालचंदभाई: दूर भागते थे। (परंतु) ये क्या?

मुमुक्षु: ये कैसे मनुष्य हैं कि ऊपर से आ रहे हैं और मेरे नजदीक ही आ रहे हैं।

पू. लालचंदभाई: नजदीक आ रहे हैं निडर!

मुमुक्षु: हाँ! निडर होकर के। मेरे हित की बात कहने को मेरे पास आ रहे हैं।

पू. लालचंदभाई: आ रहे हैं। बोलो! परिणाम पलटे। आहाहा! सिंह ने भगवान के दर्शन तो किये परंतु सिद्ध पर्याय के दर्शन कर लिए। हें! पाँच पर्याय को जान लिया ज्ञान ने ऐसा ज्ञान प्रगट हो गया। गजब की बात है। आहाहा!

समयसार और प्रवचनसार पूर्ण हैं बस। बारह अंग, दोनों शास्त्र में बारह अंग भरे हैं, बारह अंग का ज्ञान। उत्पाद सत्, व्यय सत्, ध्रुव सत् यह प्रवचनसार (गाथा १०७) में है। लो, हो गया टाइम, बहन!